International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157
Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 167-172

प्रारम्भिक तुर्क सुल्तानों के समय अमीर वर्ग की भूमिका एवं योगदान (1200 ई. से 1290 ई.) : एक अध्ययन

धर्मबीर
शोधार्थी, इतिहास विभाग, मदवि, रोहतक, हरियाणा, भारत।

सारांश
शासक के नीचे मन्त्रीगण या अमीरों का स्थान होता है। वे शासक की शक्ति सम्पन्नता का समर्थन करते हैं। इसे हम प्राचीनकाल, मध्यकाल या आधुनिक काल के संदर्भ में देख सकते हैं। लेकिन भारतीय अमीर वर्ग एवं मुस्लिम अमीर वर्ग में दिन–रात का अन्तर था। मुस्लिम संसार का अमीर वर्ग का अपना अलग महत्व था। तुर्कों के समय में अमीर वर्ग ने अपना वर्चस्व जमा लिया था। तुर्कों के समय में अमीर वर्ग के उत्थान, रहन–सहन, सुल्तानों पर प्रभाव आदि का अध्ययन हम इस रिसर्च पेपर में करेंगे।

मूलशब्द : अमीर वर्ग, संरक्षण, स्वार्थ, उत्तराधिकारी, विरोध, पदोन्नति।

प्रस्तावना
शासक के नीचे मन्त्रीगण या अमीरों का स्थान होता है। वे शासक की शक्ति सम्पन्ता का समर्थन करते हैं इसे हम प्राचीनकाल, मध्यकाल या आधुनिक काल के संदर्भ में देख सकते हैं। मध्यकालीन राजनीतिक व्यवस्था एवं राजवंशों के उत्थान एवं पतन में अमीर वर्ग का सक्रिय योगदान था। अमीर वर्ग जनता एवं शासक के मध्य एक प्रकार की कड़ी का काम करते थे। अमीर वर्ग का उद्भव हम प्राचीन भारत एवं विश्व के अन्य देशों में भी देख सकते हैं। लेकिन भारतीय अमीर वर्ग एवं मुस्लिम अमीर वर्ग में दिन–रात का अन्तर था। मुस्लिम एक अलग समुदाय एवं जाति तथा सांस्कृतिक परिवेश के लोग थे। जिनका पहनावा, खानपान तथा रहन–सहन सभी भारतीय पृष्ठभूमि से भिन्न था।

मुस्लिम संसार में अमीर वर्ग का अपना अलग महत्त्व था। हम अमीर वर्ग के संदर्भ में देख सकते हैं। पैगम्बर मुहम्मद के शिष्य अली, अबुबकर, उस्मान, जैद आदि अमीर वर्ग की आरम्भिक कड़ी है। पवित्र खलीफाओं के समय हम उमर एवं उस्मान तथा अली की सहायता के रूप में हम उनके अमीरों को देख सकते हैं। इसी प्रकार उम्मैयेदो तथा अब्बासिद खलीफाओं के समय हम अमीर वर्ग के उद्भव एवं विकास के संदर्भ देख सकते हैं। मुहम्मद गजनवी अपने संगठित अमीरों की बदौलत ही भारत आदि देशों में सफल सैनिक अभियान कर सका। यही प्रभाव भारत में मुहम्मद गौरी के संदर्भ में देख सकते हैं।

प्रारम्भिक तुर्कों के समय में अमीर वर्ग ने अपना वर्चस्व जमा लिया था। सुल्तान की शक्ति पर अमीर वर्ग का प्रभाव भी कुछ हद तक प्रतिबंधों के रूप में काम करता था। सल्तनत काल में प्रायः सभी प्रभावी पदों पर नियुक्त व्यक्तियों की सामान्य संज्ञा थी 'अमीर'। इन अमीरों का प्रभाव उस समय अधिक होता था, जब सुल्तान अयोग्य, निर्बल अथवा अल्प व्यस्क होता था। जैसकि इल्तुतमिश के समय में अमीरों का संगठन 'तुर्क–ए–चहलगानी' बनाकर इल्तुतमिश ने अमीरों पर लगाम कसी, लेकिन उनके उत्तराधिकारीयों के समय के सभी सुल्तान अमीरों के हाथों के कठपूतलियां थे। लेकिन बलबन के समय में अमीर आज्ञाकारी से अधिक कुछ नहीं थे।

अमीर वर्ग संरचना एवं स्वरूप
भारत पर तुर्क विजय के परिणामस्वरूप जहां एक तरफ राज्य के स्वरूप में परिवर्तन आया वही दूसरी और नवीन शासक वर्ग (अमीर वर्ग) का भी उदय हुआ जो अपने उद्भव के प्रारम्भ में जातीयता का आधार लिये हुए थे। तुर्की सुल्तानों द्वारा रचित अमीर वर्ग का स्वरूप एवं सगंठन समय के साथ परिवर्तित होता रहा। सामान्यतः इस नये शासक वर्ग का व्यक्ति अपने सेवाकाल का प्रारम्भ सुल्तान अथवा अन्य अमीरों के गुलामों के रूप में करता था तथा अपनी योग्यता व शासकीय अनुकम्पा से विभिन्न पदों पर कार्य करने के पश्चात् अमीर पद को अर्जित कर पाता था।[1] मलिक का पद प्राप्त करने के पश्चात् ही उसे अमीर वर्ग में शामिल किया जाता था। यहां यह उल्लेखनीय है कि अमीर शब्द एक उच्च सैनिक व शासक पद के लिये योग्य होने के साथ–साथ इस शब्द का प्रयोग शासक वर्ग की पहचान के संदर्भ में भी किया जाता रहा है। इसके अन्तर्गत खान, मलिक व अमीर आते थे।[2] यद्यपि खान, मलिक व सिपहसालार, सरखेल आदि अमीर की पद्वियां सैनिक पदों की श्रेणियों को चिन्हित करती थी। किन्तु इसके साथ ही ये सामाजिक प्रतिष्ठा आर्थिक साधनों का उपयोग व प्रशासनिक अधिकारों को द्योतक भी थी। खान मलिक व अमीर के ही शासक वर्ग में समाविष्ट करने का औचित्य यह था कि इस श्रेणी के अधिकारी ही सुल्तान तक अपनी पहुंच रखते थे। अमीर वर्ग के औचित्य के बारे में आई.एच. कुरैशी का कहना था कि जिस प्रकार राज्य विश्वास के बिना सम्भव नहीं हो सकता उसी प्रकार बिना अमीरों के शासन कार्य संभव नहीं हो सकता। नवांगतुक एवं स्थानीय अमीरों ने मिलकर अमीर वर्ग का गठन किया। के.एम. अशरफ उन भारतीय इतिहासकारों में प्रथम है, जिन्होंने तुर्क अमीर वर्ग के संगठन एवं स्वरूप का अध्ययन किया। अशरफ के अनुसार तुर्क अमीर वर्ग को दो भागों में बांटा जा सकता है। प्रथम उलेमा एवं द्वितीय उमरा। यद्यपि इन प्रमुख समूहों के अतिरिक्त अमीरों के छोटे समुह भी थे, किन्तु प्रतिष्ठा व प्रभाव की दृष्टि से यह समूह उक्त समूहों की तुलना में नाम मात्र का था। अतः के.एम. अशरफ ने इनको महत्वहीन कहकर अध्ययन से परे रखा। वस्तुतः कुलीन वर्ग के अध्ययन के अन्तर्गत इन निम्न श्रेणी के लोगों को महत्वपूर्ण न समझाना पूर्णतः उचित प्रतीत नहीं होता।[3]

अमीर वर्ग के प्रकार
मुहम्मद हबीब में इस कथन में काफी सत्यता है कि प्रारम्भिक चरण

में भारतीय तुर्क गुलाम शासक वर्ग एक सामुदायिक परिवार के रूप में था। कुछ खलजी व ताजिक अमीरों को छोड़कर इस वर्ग के अधिकांश सदस्य तुर्क थे। तुर्क अमीरों को चुंकि सुल्तान मुइज्जुद्दीन साम (मुहम्मद गौरी) का संरक्षण प्राप्त था। अतः उन्हें हिन्दुस्तान के सर्वाधिक उपजाऊ प्रदेश प्रदान किये गये, जहां वह अपनी सत्ता को सुदृढ़ कर सकते थे। इसके विपरीत खजली अमीरों की नियुक्ति आसाम, बिहार व बंगाल जैसे दूरस्थ क्षेत्रों में की गई और एक तरह इन्हें राजनीति के प्रमुख केन्द्रों से दूर रखा गया। यह जातीय संरचना कैकुबाद के शासनकाल तक तुर्क अमीर वर्ग की महत्वपूर्ण विशेषता बनी रही।

यद्यपि महत्व की दृष्टि से इलबरी तुर्क अमीर वर्ग के बाद ताजिक अमीरों का स्थान था। जिसके सदस्य दरबार में महत्वपूर्ण पद प्राप्त किये हुए थे। मध्य एशिया में मंगोल अतिक्रमण के कारण कुलीन वंश के बहुत से युवराज तथा अमीर परिवार के लोग हिन्दुस्तान में आकर बस गये, जहां इल्तुतमिश एवं उसके उत्तराधिकारीयों में उन्हें सम्मानित पद प्राप्त किये।[4] इतिहासकार मिन्हास–ए–सिराज ने उन ताजिक अमीरों के नामों का उल्लेख किया है, जो इल्तुतमिश के शासनकाल में सेवारत थे। इसके खावारिज़्म में शाहजादा मलिक फिरोजशाह इल्तुतमिश तुर्किस्तान के शाहजादे मलिक अलाउद्दीन जानी एवं मलिक इज्जुदीन हजमा, अब्दुल जलाली के नाम मुख्य हैं। वजीर निजामुल्मुल्क कमालुद्दीन जुनैदी तथा उसका नायब ख्वाजा मुहाज्जबुद्दीन भी ताजिक थे। रूकुनुद्दीन फिरोजशाह के तथा नासिरूद्दीन के शासनकाल में बहुत से ताजिक अमीर उच्च पदों पर प्रतिष्ठित थे तथा इमामुद्दीन रैहान के पतन में उन्होंने इल्बरी अमीरों का साथ दिया था।

पेशकशी अमीरों की भी एक बहुत बड़ी संख्या थी। अमीर दरबार में उपस्थित रहते थे, परन्तु इनका राजनीतिक क्रियाकलाप प्रभावहीन था। लखनौती के मुक्तिशप दानुज ने तुगरिल अधिकार के समय बलबन की सहायता की थी। बलबन ने इसके बदले उसे दरबार में सम्मानित किया। कैकुबद के शासनकाल में पेशकशी राजाओं की संख्या भी काफी अधिक थी।

अमीरों में अन्य महत्वपूर्ण वर्ग ऐबीसीनियाई अमीरों का था। कुतुबुद्दीन ऐबक के शासनकाल में अवध के मुक्ति मलिक काम्याज जो सम्भवतः ऐबीसीनियाई था, अन्य अमीर सिन्ध एवं देव रम के मुक्ति मलिक सिनातुद्दीन चातिसर (हब्श) इल्तुतमिश की सेवा में नियुक्त था। वास्तव में सुल्तान राजाओं के शासन काल में ऐबीसीनियाई अमीर प्रभुत्व में आये वस्तुतः जमालुद्दीन याकुत की हत्या इस तथ्य को स्पष्ट करती थी कि तुर्की साम्राज्य में बाहर के व्यक्ति का सल्तनत के साथ सम्पर्क को स्वीकार नहीं किया जाता था। व्यक्तिगत रूप में सल्तनत के बाद सुल्तान अलाउद्दीन मसुदाशाह के शासनकाल में कुछ समय के लिए इनके प्रभाव में पुनः वृद्धि हो गई थी।[5]

इल्बरी तुर्कों के शासनकाल में नव मुस्लिम धर्म परिवर्तित मंगोलों का भी अमीर वर्ग में महत्वपूर्ण स्थान था तथा शासनकाल के अन्तिम वर्षों में इनका प्रभाव और बढ़ गया था।[6] बलबन कालीन अमीरों की सूची में दो मंगोल अमीरों को सरिश्तादारी मैसाना एवं सरिश्तादारी मैसारा का पद प्राप्त था तथा एक अन्य को भी उच्च पद प्राप्त था। कैकुबाद के शासनकल में मंगोल मुसलमानों को अनेक महत्वपूर्ण पद प्राप्त थे। वस्तुतः इल्बरी अमीर नव मुस्लिमों, अमीरों से द्वेष रखते थे तथा उन्होंने अनेक अमीरों को मरवा डाला था।

K.M. Ashraf के अनुसार इल्बरी शासनकाल में अफगान अमीरों का भी समावेश हुआ।[7] पृथ्वीराज चौहान के विरुद्ध मुहम्मद गौरी द्वारा संचालित सेना में अफगान दल की संख्या बारह हजार थी। अफगान दल का नेता मलिक मुहम्मद लोदी था, जिसके भाई मलिक शाह को भी गौरी का आश्रय प्राप्त था। गौरी ने मलिक मुहम्मद को भी काफी प्रतिष्ठित किया। कुतुबुद्दीन ऐबक ने भी अफगानों को उच्च पद तथा संरक्षण प्रदान किया था। इल्तुतमिश से बलबन तक इनका कोई विशेष महत्व नहीं था। लेकिन बलबन के शासनकाल में इनका महतव काफी बढ़ गया। अफगान सैनिकों ने भी हिन्दुओं को हराने में मदद की थी।

इस प्रकार घनश्याम दत्त के अनुसार 13वीं शताब्दी में अमीर वर्ग में गैर तुर्ग अमीरों का समावेश हो गया था। पर तुर्क अमीरों का स्थान सर्वोच्च बना रहा जो सही अर्थों में शासक वर्ग का समान करते थे।[8]

अमीरों का योगदान

भारत में प्रारम्भिक तुर्क शासन में अमीरों ने बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सुल्तान के तुरन्त नीचे अमीरों का स्थान था [9] वे उसके शक्ति सम्पन्नता का समर्थन करते थे, किन्तु यदा–कदा उसके प्रकार्यों को अपने अधिकार में कर लेते थे और अगर कोई सत्तारूढ वंश निर्बल हो जाता तो वे उसका स्थान ग्रहण कर स्वयं के किसी अनुयायी को स्थापित कर देते। क्योंकि सल्तनत काल में राज्य पर इस वर्ग का बहुत प्रभाव था। इसलिए दिल्ली सल्तनत के समय अमीर संगठन स्वरूप व सुल्तान के साथ उनके सम्बन्धों का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है।[10]

निगम कहता है कि अमीरों ने आरम्भिक तुर्की साम्राज्य के गठन करने में उसकी शासन व्यवस्था करने में सक्रिय भाग लिया। अमीरों का उत्थान आकस्मिक था और उसमें वे सब परिस्थितियां निहित थीं, जिनके कारण दिल्ली सल्तनत की स्थापना हुई थी। मुहम्मद गौरी की तराईन के युद्ध में पृथ्वीराज चौहान पर विजय के पश्चात् हिन्दुस्तान में साम्राज्य की स्थापना का कार्य केवल मुहम्मद गौरी के ही पौरुष और रणकुशलता का परिणाम न था जिस प्रकार भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना का श्रेय अकेले बाबर को जाता है। जबकि दिल्ली सल्तनत की स्थापना विभिन्न अमीरों के सहयोग से ही पूर्ण हो पाई थी। जिन्होंने मुहम्मद गौरी के नाम पर विभिन्न प्रदेशों को जीता था। इन अमीरों में मुख्य थे कुतुबुद्दीन ऐबक, मलिक मुहम्मद अख्त्यार खिलजी तथा नासिरूद्दीन कुबाचा।

इन विजय योजनाओं के मध्य ही मुहम्मद गौरी की अचानक मृत्यु हो गई। मुहम्मद गौरी का कोई पुत्र नहीं था। इसलिए वह अपना उत्तराधिकारी नियुक्त नहीं कर सका। 1 मार्च 1206 ई. में सुल्तान ग्यासुद्दीन महमूद ने कुतुबुद्दीन को एक पत्र प्रदान किया। उसे मलिक बनाया व भारत का शासक नियुक्त किया। कुतुबुद्दीन के राज्य रोहण को मुवज्जी अमीरों ने निर्विरोध स्वीकार किया। परन्तु ताजुद्दीन यल्दौज जो सुनाम और समाना का अधिकारी था, कुतुबुद्दीन का विरोध करने के लिए तैयार हो गया।[11] कुतुबुद्दीन ने अपने विरोधी को पराजित कर अपनी स्थिति को मजबूत बनाया। कुतुबुद्दीन के राज्यभिषेक के सम्बन्ध में उसके औचित्य का प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण है और वही से अमीरों के साथ सम्बन्धों का अध्याय शुरू होता है। मुस्लिम संसार में नेतृत्व व शक्ति राज्य प्राप्ति के प्रमुख गुण माने जाते थे। वंश परम्परा और खलीफा के द्वारा मान्यता पहले दो तत्वों की तुलना में गौण थे। कुतुबुद्दीन ने खलीफा से मान्यता प्राप्त करना आवश्यक नहीं समझा। क्योंकि ग्यासुद्दीन मुहमद ने पूर्ण राज्य सत्ता प्रदान कर दी थी। अमीरों द्वारा उसके राज्य रोहण का कोई विरोध नहीं किया। जिसका प्रमुख कारण निगम के अनुसार यह था कि तुर्की अमीरों के अभी कोई निहित हित और स्वार्थ नहीं थे। वे केवल अधिक से अधिक प्रदेशों को ही अपने अधीन करने के इच्छुक थे। इस कार्य में उनके नेता

का निर्णय अन्तिम और मान्य था। कुतुबुद्दीन के काल में यह उद्देश्य शिरोधार्य करके काम करते रहे। लेकिन जैसे–जैसे सल्तनत दृढ़ होती गई वैसे एक प्रशासनिक अधिकारी वर्ग का उदय हुआ। जो शीघ्र ही यह एक सान्तीय वर्ग में परिवर्तित हो गया और इस वर्ग ने अपने स्वार्थों तथा हितों को सर्वोपरी माना। इस प्रकार सुल्तान तथा अमीरों के बीच संघर्ष शुरू हो गया।[12]

सन् 1210 ई. में कुतुबुद्दीन की अचानक मृत्यु के कारण राज्य में अशान्ति फैल गई। कुतुबी मलिकों व अमीरों ने उसके पुत्र आराम शाह को सुल्तान घोषित कर दिया।[13] R.K. Saxena के अनुसार कुतुबुद्दीन की तीन पुत्रियां थी। मिनहाज सिराज भी अपने ब्योरे में आराम शाह का कोई संदर्भ नहीं देता। रेवर्टी उसको ऐबक का दत्तक पुत्र मानता है। 'ताज–उल–मासिर' का लेखक हसन निजामी भी आरामशाह के बारे में मौन है।[14] इस प्रकार अनिश्चित जानकारी वाले सुल्तान को दूर के प्रदेशों के शक्तिशाली शासकों ने उसे सुल्तान स्वीकार नहीं किया तथा कुतुबुद्दीन के दामाद इल्तुतमिश को बदायूं से बुलवा लिया। स्वयं कुतुबुद्दीन भी उसको उत्तराधिकारी बनाने के पक्ष में था। कुछ अमीरों को इल्तुतमिश का सुल्तान बनना अच्छा नहीं लगा। उनको इल्तुतमिश ने पराजित कर दिया तथा 1211 ई. में इल्तुतमिश गद्दी पर बैठा।

इल्तुतमिश का राज्य रोहन तुर्की अमीरों की शक्ति के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना है। पहली बार अमीरों ने अपने नेता को चुनने के अधिकार का दृढ़ रूप में प्रयोग किया और यह साबित कर दिया की नेता चुनने का अधिकार दिल्ली के अमीरों का क्षेत्र है न कि लाहौर के अमीरों का। भविष्य में दिल्ली राजनैतिक गतिविधियों का केन्द्र बन गई। इल्तुतमिश जो कि दिल्ली सल्तनत का वास्तविक संस्थापक था, ने दूसरे शक्तिशाली सरदारों के दमन की नीति नहीं अपनाई और इसलिये उसके राज्यभिषेक के बाद भी कई वर्षों तक यल्दौज, कुबाचा आदि विधिवत् शासन करते रहे। जबकि ये दोनों इल्तुमिश के प्रबल विरोधी थे। लेकिन इल्तुतमिश ने सही समय आने पर ही उनको विधिवत् पराजित किया। इन विजयों से दिल्ली की सीमा तथा इल्तुतमिश की ख्याति में वृद्धि हुई। 1229 ई. में उसको 'अमीरूल मुमनीम' की उपाधि दी गई खलीफा द्वारा इस सम्मान से उसे मुस्लिम संसार में स्वतंत्र सुल्तान मान लिया गया तथा उसके विरुद्ध षड्यन्त्र बन्द हो गये।[15]

बरनी का यह कथन है कि इल्तुतमिश ने राजगद्दी प्राप्त करने के लिये कई मुइज्जी अमीरों की शक्ति का पतन किया ये सही नहीं प्रतीत होता। इसके विपरीत उसमें कई छोटे अमीरों की पदोन्नति की और उन्हें सम्मान प्रदान किया।

जैसा कि त्रिपाठी का विचार है कि इल्तुतमिश अपने संकोची स्वभाव के कारण राजसिंहासन पर बैठने में भी हिचकिचाता था और स्वयं को अमीरों के समान ही समझता था। मनुष्यों का चतुर पारखी होने के कारण उसने अमीरों में फूट डलवाने का कार्य सफलता से किया। यद्यपि उसके जीवन काल में यह फूट और मतभेद स्पष्ट तौर पर नहीं उभर सके। परन्तु उसकी मृत्यु के बाद अमीरों के आपसी दल बन गये। वे एक दूसरे को समाप्त करने की नीति का खुले रूप में पालन करने लगे। इस प्रकार इल्तुतमिश ने अमीरों में फूट के बीज बोकर एक नीति का श्रीगणेश किया। जिसके फल भविष्य में उसके उत्तराधिकारीयों को भोगने पड़े। यद्यपि उसने राजगद्दी को वंश परम्परा के सिद्धान्त पर आधारित कर इस संघर्ष को सीमित करने का प्रयास किया था। परन्तु उसकी यह योजना असफल रही।[16] चालीस गुलाम के दल का अभिप्राय यही नहीं था। इस दल में सदस्यों की संख्या चालीस होगी।[17] बाद में इतिहासकारों में इस दल के बारे में एक धारणा 'मखजात–ए–अफगानी' में है कि कुतुबुद्दीन ऐबक को एक चहलगानी बताया गया है। इस पुस्तक में कहा गया है कि 'जब सुल्तान शहाबुद्दीन मर गया तो उसके मालिक के एक सदस्य कुतुबु को राजगद्दी पर बैठाया गया'। इसका अर्थ हुआ कि चहलगानी मोहम्मद बिन साम के समय से है। मिनहाज सिराज के विभिन्न प्रमाणों से यह साबित होता है कि 'मखजात–ए–अफगानी' की सूचना सही प्रतीत नहीं होती।

पहली बार बरनी हमें चहलगानी दल के सही स्वरूप तथा इसकी स्थिति के बारे में बताता है। वह कहता है 'सुल्तान शम्मुद्दीन की मृत्यु के बाद उसके दास बहुत शक्तिशाली हो गये थे।' इल्तुतमिश की मृत्यु के बाद फिरोज के राज्य रोहण में इस दल ने अच्छी भूमिका निभाई। इस प्रकार यह एक राजनैतिक दल था। क्योंकि इल्तुतमिश के दरबार में बहुत से विदेशी उच्च पदों पर थे। लेकिन उनके मध्य सहिष्णुता की भावना नहीं थी। हर दास अपना प्रभुत्व स्थापित करने की सोचता था। उनके दिमाग में एक ही बात थी कि ऐसा दूसरे के पास क्या है, जो मेरे पास नहीं। मिनहाज सिराज हमें इल्तुतमिश के समय की 30 अमीरों की सूची देता है। वह 25 अमीरों की जीवनी का वर्णन भी करता है। इसलिये ये जरूरी नहीं कि इस दल में चालीस ही दास हों। इस प्रकार बरनी के अनुसार ये चालीस दास सरकार को नियंत्रित करते थे। इल्तुतमिश की मृत्यु से बलबन के राज्यरोहन तक इस दल ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।[18]

इल्तुतमिश की मृत्यु के बाद चहल का दल एक संगठन के रूप में उभर आया था। हालांकि इल्तुतमिश का एक बेटा महमूद जो उसका उत्तराधिकारी था। वह मंगोलों के विरुद्ध में मारा गया। उसके दूसरे बेटे निकम्मे थे। इसलिये उसने अपनी बेटी रजिया को अपना उत्तराधिकारी बनाया। जो एक बहुत बड़ा फैसला था। इल्तुतमिश की मृत्यु के बाद अमीरों ने बड़ी संख्या से रुकनुद्दीन फिरोज शाह को सुल्तान बना दिया। अमीर फिरोज के पक्ष में इसलिये थे क्योंकि फिरोज की मां शाहतुर्कान हरम की मुख्य रानी थी तथा वह अमीरों को बहुमूल्य भेंट देती थी। दूसरे अमीर किसी स्त्री द्वारा शोषित नहीं होना चाहते थे। लेकिन इल्तुतमिश रजिया को अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता था।[19] फिरोज ने राज्य करना आरम्भ किया, लेकिन वह बहुत निकम्मा निकला। उसका सारा समय ऐशोआराम में बीतता था। इसलिये राज्य में असन्तोष था। उसका वजीर ख्वाजा निजामुद्दीन भी विद्रोहीयों से जा मिला, रुक्कुद्दीन पराजित हुआ तथा दिल्ली की हमदर्दी के कारण रजिया को उत्तराधिकारी चुना।[20]

रजिया का उत्तराधिकारी चुना जाना कुछ अमीरों को जैसे अलाउद्दीन जैनी, मलिक सफिउद्दीन को रास न आया। क्योंकि रजिया को चुनते समय इन अमीरों की राय नहीं ली गई थी। इसलिये ये रजिया को पद से हटाने के लिए कटीबद्ध हो गये और रजिया के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। लेकिन रजिया ने कुटनीति से काम लिया तथा विद्रोहियों में से इज्जुद्दीन मुहम्मद तथा इज्जुद्दीन कबीर को अपनी तरफ मिलाया तथा विद्रोह को दबाया। रजिया ने अपने अमीरों को उच्च पद दिये।[21] अमीरों ने रजिया की सहायता इसलिये की थी कि रजिया स्त्री होने के कारण सदैव उन पर आश्रित रहेगी तथ वे अपनी मर्जी से शासन चला सकेंगे। लेकिन उनकी ये आशाएं पूरी न हो सकीं, क्योंकि रजिया पर्दा त्याग कर खुला दरबार लगाने लगी तथा सक्रिय रूप से शासन करने लगी। उसने मलिक इख्तियारूद्दीन कबीर को अमीर–ए–हाजिंब तथा एबीसीनियाई गुलाम याकूत को अमीर–ए–आखुर बनाया । जिसको चालिसा का दास सहन नहीं कर सके। केन्द्र के अमीर भी अब रजिया के खिलाफ हो गये।[22]

1230–40 में लाहौर के मुक्ति मलिक इज्जुद्दीन कबीर ने विद्रोह

कर दियां इज्जुद्दीन कबीर के विद्रोह ने उन असंतुष्ट अमीरों को जो कि रजिया के जमालुद्दीन के प्रति लगाव से क्रुध थे, बाद में एक ऐसा अवसर दिया जब वे रजिया से अपनी नाराजगी का बदला ले सकते थे, लेकिन रजिया ने शीघ्र ही इस विद्रोह को दबा दिया। भटिण्डा के शासक इख्तियारूद्दीन अलतुनिया ने भी रजिया के विरुद्ध विद्रोह कर दिया, जो रजिया का विश्वास पात्र था। उस मुकाबले में याकूत मारा गया तथा रजिया को बन्दी बना लिया।[23] रजिया ने अल्तुनिया से शादी कर ली तथ उन्होंने दिल्ली की तरफ प्रस्थान किया। इसी बीच षड्यन्त्रकारियों ने बहराम शाह को गद्दी पर बैठाया। उन्होंने कैथल के समीप रजिया को मार दिया। रजिया का एबीसिनिया के गुलाम जमालूद्दीन याकूत को ऊंचा पद शायद इसलिए दिया था कि वह इस प्रकार से तुर्की अमीरों को दबाने का प्रयत्न कर रही थी। जिनमें राज्य तथा ताज के लिये कोई आस्था नहीं रह गई थी। इसलिए तुर्की अमीरों की शक्ति का अन्त तथा उनके विरोधियों की बढ़ौत्तरी करके राज्य करना ही उसको उचित नीति लगी। क्योंकि इसके सिवा उसके पास कोई रास्ता नहीं था।[24] रजिया की मृत्यु (1240 ई.) से बलबन की शक्ति के उत्थान के बीच का काल अमीरों और सुल्तान के बीच संघर्ष का काल था। यद्यपि अमीर इस बात से सहमत थे कि राजगद्दी पर इल्तुतमिश के किसी वंशज को बैठाया जाये ताकि समस्त शक्ति और अधिकार उनके हाथ में रहें। जैसाकि एक आधुनिक इतिहासकार आ.पी. त्रिपाठी का कथन है कि 'इल्तुतमिश के परिवार के इतिहास में मुख्य संवैधानिक हित वास्तविक सत्ता पर कब्जा बनाए रखने के लिये सुल्तान और अमीरों के बीच संघर्ष में निहित हैं।' आरम्भ में इस संघर्ष में अमीरों को सफलता मिली। अमीरों ने इल्तुतमिश के पुत्र बहराम शाह को इस शर्त पर सुल्तान बनाया कि वह तुर्क अमीर ऐतिगिन को नायब वजीर के पदपर नियुक्त करेगा। कुछ समय तक तीन अमीरों नायब, बजीर और मुस्तौकी के निकाय ने एक प्रकार से प्रशासनिक परिषद् के रूप में कार्य किया। जिसमें सुल्तान का प्रभुत्व केवल एक औपचारिकता मात्र रह गया। किन्तु त्रिशासक गुट के बीच स्वार्थों के आपसी टकराव एवं अपनी शक्तियां पुनः हस्तगत करने के सुल्तान के प्रयासों ने वजीर के साथ एक ऐसे संघर्ष को जन्म दिया। जिने बहराम शाह को अपनी जिन्दगी तथा रजागद्दी दोनों से हाथ धोने पड़े। उसके बाद सुल्तान बनने वाले मसूद का भी यही अंजाम हुआ। वजीर निजामुल्क के अपने हाथों में सारी शक्तियां समेंटने के प्रयास के कारण उसकी हत्या कर दी गई और बलबन का उदय हुआ। जिसने बाद में अपनी कौशिशों से सुल्तान को भी पदमुक्त कर दिया।[25]

इस प्रकार इल्तुतमिश की मृत्यु के बाद छः वर्षों के छोटे से काल में चार सुल्तानों की हत्या ने सुल्तान और तुर्क अमीरों के सम्बन्धों में एक गंभीर कट्टरता उत्पन्न हो गई। इस काल में अमीर राजसत्ता के सर्वेसर्वा थे। लेकिन वे कोई संयुक्त मोर्चा प्रस्तुत करने में असफल रहे।[26] सतीशचन्द्र के अनुसार 1246 इ. में इल्तुतमिश के एक पौत्र नासिरूद्दीन महमूद को सुल्तान बनाना वास्तव में बलबन की चतुराई थी। पहले तो उसने राज्य में सभी अमीरों को अपने विश्वास में लिया। अमीरों के लिये नासिरूद्दीन महमूद एक अच्छा साधन था, क्योंकि राजनैतिक तथा प्रशासनिक मामलों में उसकी कोई रूचि नहीं थी। क्योंकि उसके पूर्ववर्ती सुल्तानों का जो हाल हुआ था वह उसके लिए प्रयाप्त सबक था।[27] महमूद का सारा समय धार्मिक क्रियाकलापों में व्यतीत होता था। इस प्रकार अमीरों की जीत हुई लेकिन यह अल्पकालीन थी।

यद्यपि बलबन को 1260 ई. में राजगद्दी मिली। किन्तु 1246 ई. से लेकर 1287 ई. में उसकी मृत्यु तक के काल को बलबन को का काल कहा जाता है।[28] उलुग खां जिसे बाद में बलबन के नाम से जाना जाता है। वह इलबरी तुर्की के एक परिवार का सदस्य था, जो इल्तुतमिश के द्वारा दास के रूप में खरीदा था। इस प्रकार बलबन खुद में एक चहलगानी था। वह अपनी बुद्धि तथा ताकत के बल पर नायब के पदपर पहुंचा तथायुवा सुल्तान नासिरूद्दीन महमूद ने अपनी बेटी की शादी करके अपनी स्थिति को सुदृढ़ किया।[29]

चहलगाती के शेष गुलाम बलबन के बढ़ते प्रभाव से परेशान थे। यहां तुर्की सुल्तान की माता भी 1252 ई. में इमानुद्दीन रैहान ने सुल्तान को भड़काया उसने सुल्तान के कानों में यह खबर डाली कि बलबन अपने सम्बन्धियों को बड़े–बड़े पदों पर इसलिये नियुक्त कर रहा है ताकि वह सिंहासन पर आसानी से अधिकार कर सके। सुल्तान ने बलबन को हांसी भेज दिया। सतीशचन्द्र के अनुसार रैहान जो कि एक हिजड़ा था, वह प्रधानमन्त्री बना।

शिव गुप्त के अनुसार रैहान ने अपने समर्थक अमीरों को उच्च पदों पर आरूढ़ किया। परन्तु रैहान अयोग्य साबित हुआ और राज्य में षड्यन्त्रों का बाजार गर्म होने लगा तुर्की अमीरों का अपमान होने लगा। बलबन के साथियों ने जिनको बलबन के अपसी होने पर हानि उठानी पड़ी थी। उसको 1254 ई. के मध्य में दिल्ली पर आक्रमण करने के लिये मजबूर किया। रैहान ने सुनाम से मिलकर उसका विरोध किया, लेकिन पराजित हो गया।[30] इससे यह साबित होता है कि तुर्की अमीरों ने उसको केवल एक मोहरा बनाया था, क्योंकि वे लोग नहीं चाहते थे कि बलबन का पद कोई और प्राप्त करे तथा मौके की नज़ाकत को देखते हुए सुल्तान ने बलबन को प्रधान मंत्री बनाया।

सतीशचन्द्र के अनुसार सत्ता में आने के बाद बलबन ने अपने विरोधियों से हिसाब चुकता किया। कुतलग खान सुल्तान की मां से शादी करके अपनी इक्ता में स्वतन्त्र व्यक्ति की तरह आचरण करने लगा था। उसके विरुद्ध सेना भेजी अन्य कई लोगों के विरुद्ध कठोर कार्यवही की और उसने सुल्तान को विवश करके शाही पत्र भी प्राप्त कर लिया। नासिरूद्दीन के अन्तिम छः वर्षों के बारे में हमें कोई ज्ञान नहीं सम्भवतः इस काल में गुटबन्दी ज्यादा बढ़ गई थी। इसलिये सुल्तान को जहर देकर मारने का निश्चय किया और उसको मार कर 1266 ई. में बलबन गद्दी पर बैठा।[31] चहल के अल्प सदस्य उसके उत्कर्ष को सहन न कर सके। स्वयं बलबन ने महसूस किया कि राजा का मान घट गया है और इसमें सबसे अधिक योगदान अमीरों का है। इसलिये उसने अमीरों की शक्ति को नष्ट करने में सक्रिय योगदान दिया। उसने अमीरों की जागीरों की शक्ति को नष्ट करने में सक्रिय योगदान दिया। उसने अमीरों की जागीरों के बारे में पूछताछ की वृद्ध और दुर्बल अमीरों की जागीर छीन ली गई और उन्हें पैंशन दी जाने लगी। विधवाओं के पास भी जागीरें थीं, उन्हें भी पेन्शन दी जाने लगी।[32]

ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रकार के कठोर नियम बलबन केवल शक्तिहीन अमीरों पर ही लागू कर सका। लेकिन शम्मी अमीरजो उसके समान ही थे, उन पर ये नियम लागू करने में बलबन असफल रहा। जैसाकि हब्बीबुल्ला ने न्याय की प्रशंसा की है। निसन्देह वह जनसाधारण के प्रति न्याय पूर्ण नीति का पालन करता था। परन्तु प्रभावशाली अमीरों के प्रति इस प्रकार का व्यवहार तो उसके प्रभाव और सम्मान को नष्ट करना ही हो सकता था। अपने वंश के अधिकार को सुरक्षित रखने के लिये वह किसी भी साधन को अपनाने को तैयार था। प्रो. निजामी ने लिखा है कि 'व्यक्ति और व्यक्ति के झगड़ों में बलबन था, लेकिन जब कभी राष्ट्रहित में टकराव होता अथवा उसे व्यक्तित्व या वंश के हितों में टकराव होता तो वह निष्पक्षता से सभी सिद्धान्तों को त्याग देता।' इसी

प्रकार उसने अपने चचेरे भाई को भी जहर देकर मार डाला।[33] बनबन ने राजत्व में फारसी सिद्धान्त को लागू किया। उसने दरबार में हंसने पर रोक लगा दी। कोई अमीर दरबार में सुल्तान से बात नहीं कर सकता था। उसने अमीरों तथा प्रजा से मिलना बन्द कर दिया। नाच और मदिरा पान की दावतों में भाग लेना छोड़ दिया।

निगम के अनुसार कुतुबुद्दीन और इल्तुतमिश के सम्बन्ध बराबरी के आधार पर थे और अमीर सुल्तान को समान वर्ग में प्रथम स्वीकार करते थे। परन्तु बलबन के राजत्व सिद्धान्त में सहभागीदार का कोई स्थान नहीं थी। इसलिए बलबन ने अपनी कठोरता से राज्य की शान और प्रतिष्ठा को पुनः प्राप्त किया। सम्भवतः अपने इस प्रयोग में बलबन सफल भी हो जाता लेकिन अपने प्रिय पुत्र महमूद की मृत्यु के सदमे को सहन नहीं कर सका। कुछ समय बाद ही बलबन की मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के बाद पुनः षड़यन्त्रों का बाजार गर्म हो गया और उसके अयोग्य उत्तराधिकारी अमीरों के हाथों की कठपुतली बने रहे।[34]

बीस वर्ष मंत्री 1246–1266 ई. तथा बीस वर्ष 1266–87–88 सुल्तान के रूप में राज्य करने के बाद बलबन की मृत्यु हो गई। उसके बाद उसका वंश 3 वर्ष से ज्यादा शासन नहीं कर सका।[35] बलबन कैखुसरो को अपना उत्तराधिकरी नियुक्त किया था, परन्तु दिल्ली के कोतवाल फरूखद्दीन मुहम्मद ने षड्यन्त्र करके कैकुबाद को सुल्तान बना दिया। सुल्तान बनने से पहले केकुबाद ने किसी स्त्री का सुन्दर मुख तक नहीं देखा था। शराब के दुर्व्यसन से दूर था और बलबन के कठोर नियंत्रण में उसका पालन पोषण हुआ था। फखरूद्दीन के दामाद निजामउल्मुल्क ने इसका लाभ उठाया तथा सुल्तान को विलासिता की तरफ प्रेरित किया। कैकुबाद राग रंग में इतना डूब गया की सुल्तान की सारी सत्ता का उपयोग निजामउल्मुल्क करने लगा था।

निजामुद्दीन अब शक्ति का प्रत्यक्ष प्रयोग करने का इच्छुक था। उसने सुल्तान को सुरा तथा सुन्दरी के जाल में फसाकर उसकी मौत का जाल बुनने लगा। उसने अपनी रानी राजमहल में निवास के लिए भेज दी रानी ने सुल्तान को पूरी तरह से अपनी मुट्ठी में कर लिया। छः मास के पश्चात् उसने शाही फरमान द्वारा कैखुसरो को दिल्ली बुलवाया। जब वह रोहतक पहुंचा तो उसका वध कर दिया।[36] जब कैकुबाद को दिल्ली के सिंहासन पर बैठाया गया तो उसका पिता बुगराखान लखनौती में सुल्तान नासिरूद्दीन के खिताब से सुल्तान बना। बुगराखान अपने पुत्र के भटकाव तथा निजामउल्मुल्क के षड्यन्त्रों के बारे में जानता था। निजामुद्दीन दोनों बाप बेटे में युद्ध करवाना चाहता था। करीब दो वर्ष बाद जब बुगराखान अपने बेटे से मिला तो उसे अपने अधिकार, कर्तव्यों तथा निजामुद्दीन के प्रति सचेत किया। कुछ समय के लिये तो कैकुबाद ने पूरी सचेतना के साथ राज किया, लेकिन बाद में फिर उसी दिनचर्या पर लौट आया। कुछ समय बाद सुल्तान ने निजामुद्दीन को मुल्तान जाने को कहा लेकिन निजामुद्दीन ने इस कार्य में अनावश्यक देरी लगाई तो तुर्क अधिकारीयों ने उसे मौत के घाट उतार दिया।[37] लेकिन फिर भी कैकुबादअपनी हरकतों से बाज नहीं आया तथा शासन की सारी बागड़ौर अब दो अमीरों मलिक कच्छन तथा मलिक सुर्खा के हाथों में आ गई थी।

शिवगुप्त के अनुसार कैकुबाद ने जलालुद्दीन खिलजी को अपना सेनापति बनाया और उसे बुलन्दशहर का इक्तेदार बनाया। खिजलीयों को गैर तुर्क समझा जाता था। इसलिए उसकी नियुक्ति पर तुर्क अमीरों में असन्तोष था। मलिक कच्छन तथा मलिक सुर्खा ने शासन में तुर्कों की श्रेष्ठता बनाये रखने के लिए समस्त गैर तुर्कों का वध करने की योजना बनाई जिसमें जलालुद्दीन खिलजी का पहला नाम था। इस समय तक कैकुबाद को लकवा मार गया था। इसलिए तुर्क सरदारों ने उसे शासन के अयोग्य मानकर तीन वर्ष के राजकुमार क़युमर्स को राजगद्दी पर बैठाया और शासन की सारी शक्ति अपने हाथों में लेने के लिए षड्यन्त्र रचा और इस षड़यन्त्र में सबसे पहले जलालुद्दीन को मारने की योजना बनाई जिसकी जिम्मेदारी मलिक कच्छन ने ली। जलालुद्दीन को सुल्तान से मिलने के आदेश निकाले और कच्छन स्वयं जलालुद्दीन को दिल्ली के लिए बुलन्दशहर गया।[38]

निगम के अनुसार जलालुद्दीन ने कच्छन का वध कर दिया और अपनी सेना लेकर दिल्ली की और चला। दिल्ली पहुंचकर उसने नवजात सुल्तान के लिए संरक्षक नियुक्त किया लेकिन किसी ने इसकी जिम्मेदारी नहीं ली इसलिए वह स्वयं सुल्तान का संरक्षक बना। लेकिन ये व्यवस्था अधिक दिनों तक नहीं चली। तीन महीने बाद ही शम्मुद्दीन का वधकर यमुना नदी में फैंक दिया। इस प्रकार बलबन के वंश का अन्त हो गया। तथा खिलजीवंश की स्थापना हुई। इसको डॉ. आर.पी. त्रिपाठी 'खिलजी क्रांन्ति' का नाम देते हैं।[39]

बरनी ने इस बात पर खेद व्यक्त किया है कि उस दिन से अधिराज्य सदैव के लिये तुर्कों के हाथ से निकल गया। उसमें केवल आंशिक सत्यहै कि मुकुट अब भी उसी जाति के सिर पर था। परन्तु तुर्की प्रभुत्ता सदैव के लिए विदा हो चुकी थी। हाजी दबिर घटना का सही मूल्यांकन करता है। वह कहता है कि क्युमर्श के साथ उस वंश का अन्त हो गया, जिसे मुईज्जुद्दीन मोहम्मद–बिन–साम ने आरम्भ किया था।[40]

निष्कर्ष

इस प्रकार अमीरों का महत्त्व भी सुल्तान की कृपा पर निर्भर था। उन्हें प्रायः स्थानान्तरित कर दिया जाता था। यद्यपि उस काल की विशेष स्थिति के कारण उनको आन्तरिक शासन में प्रयाप्त स्वतन्त्रता प्राप्त थी। अमीरों का महत्व सुल्तानों को राजगद्दी पर उतारने वालों तथा बैठाने वालों के रूप में बना रहा। इनमें आपसे में भी गुटबन्दी रहती थी। जिसके कारण इनका महत्व घटता रहा। इस प्रकार मध्यकालीन भारतीय राजनीतिक व्यवस्था एवं राजवंशों के उत्थान तथा पतन में अमीर वर्ग का महत्व पूर्ण योगदान था। भारत में तुर्क विजय के साथ ही इस वर्ग की रचना हुई।

अमीर वे स्तम्भ थे, जिन पर मुल्तान की सत्ता टिकी होती थी। बरनी उनका महत्व समझाते हुए कहता है कि यदि अमीर वर्ग उच्च वंश के और सच्चरित्र होंगे तो शासन का कार्य अस्थिर न होगा। परन्तु हम देखते हैं कि पूरे सल्तनत काल में अमीर दोमुखी संघर्ष में रत थे। एक तरफ उनमें परस्पर शक्ति प्राप्ति के लिए संघर्ष चलता रहा तो दूसरी तरफ अमीरों और सुल्तान के मध्य वास्तविक सत्ता प्राप्ति के लिए संघर्ष चलता रहा। आधुनिक इतिहासकार आई. एच. कुरैशी इनके बारे में बताते हैं कि अमीर राजा के सामने कभी नहीं झुके। वे लोग झुके तो सिर्फ अपने हितों के सामने।

अमीर वर्ग ने अपने स्वार्थों की पूर्ति का कोई भी मौका अपने हाथ से नहीं जाने दिया। मौका मिलते ही उन्होंने या तो राजा की हत्या की या पदचयुत कर दिया। इस प्रकार निगम के अनुसार सम्पूर्ण इल्बरी काल में अमीरों ने किंग मेकर की भूमिका निभाई और अपनी ताकत का अंदाजा इतिहास को करा दिया।

संदर्भ ग्रन्थ

1. Nizami KA. Some aspect of religion and polities in India during The thrteenth century, 1961-1974-1997, 124.
2. Ashraf KM. Life and Condition of the people of Hindustan, 1970, 84.
3. घनश्याम दत्त शर्मा, मध्यकालीन भारतीय सामाजिक आर्थिक

एवं राजनैतिक संस्थाएं, पृ. 92
4. Nizami KA. Idbi, 127
5. घनश्याम दत्त शर्मा, पहले उद्धत्, पृ. 93–94
6. Ashraf KM. 95
7. Idbi, 94.
8. घनश्याम दत्त शर्मा, पहले उद्धत्, पृ. 94
9. Ashraf KM. Ibid, 84.
10. Nigam SB. Mobidity Under The Sultans of Delhi, 21.
11. Nizami KA. Ibid, 134.
12. Nigam SBP. पहले उद्धत, पृ. 23
13. Nizami KP. पहले उद्धत्, पृ. 134
14. डॉ. आर.के. सक्सैना, दिल्ली सल्तनत (1200–1586), पृ. 31
15. शिव कुमार गुप्त, मध्यकालीन भारत का इतिहास (1000–1526), पृ. 274–75
16. Nigam SBN. पहले उद्धत्, पृ. 26–27
17. बी.एल. गुप्ता, पेमाराम, मध्यकालीन भारत (1000–1761), 1992, पृ. 77
18. Nigam SBP. पहले उद्धत्, पृ. 192–193
19. Tripathi RP. Some Respects of Muslims Administration, 28
20. Ibid.
21. आर.के. सक्सेना, दिल्ली सल्तनत, पृ. 47–48
22. एच.सी. वर्मा, मध्यकालीन भारत (750–1540), पृ. 133
23. के.ए. निजामी, पहले उद्धत्, पृ. 137
24. शिव कुमार, गुप्त, हल्ले उड्डत हैं, पृ. 276
25. सतीशचन्द्र, मध्यकालीन भारत : सल्तनत से मुगलों तक, पृ. 41
26. आर.पी. त्रिपाठी, पहले उद्धृत्, पृ. 31
27. के.ए. निजामी, पहले उद्धृत, पृ. 140
28. सतीश चन्द्र, पहले उद्धृत, पृ. 42
29. के.ए. निजामी, वही, पृ. 141
30. वही, पृ. 141
31. सतीशचन्द्र, वही, पृ. 43
32. शिव कुमार, वही, पृ. 277
33. आर.के. सक्सेना, वही, पृ. 71–72
34. एस.बी.पी. निजामी, वही, पृ. 44
35. हरिशचन्द्र वर्मा, वही, पृ. 71–72
36. के.ए. निजामी, वही, पृ. 144
37. हबीबुल्ला, भारत के मुस्लिम राजा की बुनियाद, 1979, पृ. 163
38. शिव कुमार गुप्त, वही, पृ. 79
39. एस.बी.पी. निजाम, वही, पृ. 48–49
40. हबीबुल्ला, वही, पृ. 167